22.0 हिंदी संत परंपरा और रैदास

- **प्रोफेसर अलका पांडे,** हिंदी विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ
  ई.मेल- alkapandeyy@gmail.com

शोध-सार

आधुनिक युग में संत रैदास की विचारधारा का अपना विशिष्ट महत्व है। लौकिक दृष्टि से, जब बड़े से लेकर छोटे तक, सब प्राणी कर्तव्य विमुख हो रहे हैं। तब लोक परलोक की निंदा स्तुति से दूर, अपनी सत साध्वी पत्नी के साथ मामूली सी झोपड़ी में बैठे हुए , जूता सीकर जीविका चलाने वाले, भक्त फकीर और तन्मय संत रैदास का कर्तव्य परायण होकर गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए आत्म उद्धार के लिए,भक्ति पथ अपनाने का संदेश किसे नहीं मोह लेता। अभ्युदय से लेकर, निष् श्रेयस की ओर ले जाने वाली, उनकी वाणी सचमुच अनुकरणीय है। उनका लौकिक और आध्यात्मिक चिंतन संसार के सभी दुखों को दूर करने के लिए रामायण के समान प्रभावशाली औषधि है, समाज के लिए भी और व्यक्ति के लिए भी।

प्रस्तुत शोध पत्र में संत परम्परा के प्रमुख संत रैदास के जीवन दर्शन एवं कृतित्व का वर्णन किया गया है

प्रमुख शब्द*- संत परम्परा, रैदास*

भारत में संत साहित्य की विशिष्ट सांस्कृतिक परंपरा रही है जिसमें विभिन्न दार्शनिक विचार धाराओं को अभिव्यक्त किया गया है। यह संत साहित्य परंपरा भारत की सांस्कृतिक परंपरा के साथ-साथ सामाजिक अंतर्द्वंद का भी इतिहास प्रस्तुत करता है। संतमत वेदों से लेकर आज तककिसी न किसी रूप में हमारे सामने प्रचलित औरप्रतिष्ठित रहा है, पर इसकी प्रतिष्ठा कबीर केसमयमें ही विशेष रूप से देखी जाती है।

संतमत ने मुख्य रूप से निर्गुण भक्ति परंपरा के विकास में योगदान दिया है। वैष्णव की सगुण भक्ति परंपरा के विपरीत संतो ने निर्गुण भक्ति परंपराको अधिक अपनाया और महत्व दिया। वैसे तो वैष्णव भक्ति से ही संतमत का जन्म हुआ किंतु आगे चलकर वैष्णव भक्ति परंपरा की सगुण उपासना को छोड़कर संतो ने निर्गुण मत को अपनाया। श्री हरिशंकर शर्मा हरीश जी ने अपनी पुस्तक 'कबीर: एक व्यक्तित्व और कृतित्व" के अंतर्गत संतमत की व्याख्या करते हुए स्पष्ट किया है कि - संतमत जाति, धर्म आदि भावनाओं से परे, सब समस्याओं का सफल हल है। यह किसी शासन या दबाव की प्रतिक्रिया नहीं है। उसमें विदेशी भाव की प्रेरणा भी नहीं है, अपितु सर्वांगीण भारतीयता है। संतो ने सदैव से ही रूढ़िवादिता, भेदभाव, वाहय आडंबर आदि को नष्ट करने पर विशेष बल दिया था और उन्होंने अपने अनुभवजन्य ज्ञान के आधार पर ही लोगों को रूढ़िवादिता और भेदभाव से बचने का संदेश दिया। साथ ही विश्व बंधुत्व की भावना को जगाए रखने पर भी बल दिया। डॉ रामकुमार वर्मा ने अपनी पुस्तक' हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास" में विस्तृत रूप से इस पर बल दिया है, कि वे कौन से कारण थे जिनसे कारण संतमत का प्रादुर्भाव हुआ। उन्हीं के शब्दों में- "हिंदू धर्म पर आघात होते ही यद्यपि जनता विचलित हो उठी। तथापि आत्मरक्षा के विचार से किसी अन्य तक हिंदुओं ने भी इस्लाम धर्म को समझने की चेष्टा की। इधर इस्लाम धर्म भी हिंदुओं के धार्मिक विचारों में परिवर्तन लाने में व्यस्त था, अब उनके उपाय भी शांतिपरक थे। फलत: धार्मिक विचारों में परिवर्तन होने लगा। जिसने हमारे साहित्य में एक नवीन धारा की सृष्टि की और यह नवीन धारा संत काव्य के रूप में प्रवाहित हुई।"

मुसलमानों के सामाजिक भेदभाव हीनता, एकेश्वरवाद और धार्मिक समानता आदि ने इस समय के समाज और साहित्य दोनों को ही प्रभावित किया। जिसका प्रभाव तत्कालीन सामाजिक धार्मिक एवं सांस्कृतिक स्थितियों पर पड़ा। स्वामी रामानंद ने भी भक्ति क्षेत्र में ऊंच-नीच के भेदभाव को मिटाने का उपदेश दिया और फलतः नामदेव, कबीर, रैदास, दादू आदि संत जो निम्न वर्ग के थे। उन्होंने भक्ति के क्षेत्र में अपना एक प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त किया। इन सभी संत मतके अनुयायियों ने अपनी सरल, सहज और अनुकरणीय भाषा में धार्मिक समानता और विभिन्न मतों के बीच समन्वय पर अधिक बल दिया। जिसका प्रभाव उनकी साधना पद्धति पर भी पड़ा।

संतो के अनुसार साधना का मूल विषय 'सत्य" है। जिसके अनेक नाम है 'परम तत्व', 'सतनाम', 'राम', 'रहीम' आदि। मुख्य बात यह है कि किसी भी संत ने स्वयं को दार्शनिक होने का दावा नहीं किया है। वह केवल साधक थे। सभी संतो ने भगवत भक्ति का प्रमुख साधन नाम स्मरण को माना साथ ही स्मृति और सुरति पर भी बल दिया। संतों का 'सत' विलक्षण है । वह कोरा अशरीरी और भावात्मक रूप में ही प्रतिष्ठित नहीं है। संतों ने उसे निर्गुण सगुण से परे एक अनुपम व्यक्तित्व प्रदान किया है। उनका राम सर्वव्यापी है। सतगुरु, साहब, पति, सखा आदि, कई संबोधनों से उन्होंने उस 'परम सत्य 'को संबोधित किया है ।साथ ही उसमें उन्होंने, एक साथ सगुण और निर्गुण दोनों तत्वों का आरोप किया है ।कहीं वह सगुण साकार है ,तो कहीं निराकार, कहीं प्रेमी और कहीं अपने प्रिय के विरह में डूबा हुआ वह मुक्ति की याचना करता है । अपने सामाजिक और गृहस्थ जीवन द्वारा संतों ने भली-भांति इसे प्रमाणित भी किया है। अधिकतर संत गृहस्थ थे । अतः उन्होंने अपने दैनिक आचरण के द्वारा आध्यात्मिकता को पुष्ट भी किया है। संत साहित्य कभी भी हमें इस संसार से पलायन करके संसार के यथार्थ को पीछे छोड़ जाना नहीं सिखाता है, बल्कि संसार की वास्तविकता से परिचित करा कर उनका सामना करने का साहस भी बंधाता है यही संत साहित्य का मुख्य गुण है। पंडित परशुराम चतुर्वेदी जी ने अपनी पुस्तक' कबीर साहित्य की परख' में कहा है कि- "संत काव्य की परंपरा तत्वत: उस काव्य रचना पद्धति की ओर संकेत करती है । जो मानव समाज की मूल प्रवृत्तियों पर आश्रित है। वह किसी समय आपसे आप चल पड़ी थी, और वह उसी रूप में विकसित भी होती गई । वह उस काल से विद्यमान है जबकि भाषा के ऊपर किसी व्याकरण का नियंत्रण न था और न उसके काव्य रूप की व्यवस्था के लिए किन्ही छंदों नियमों को की ही सृष्टि हो पाई थी। वह स्वभावतः स्वच्छंद रूप में ही अग्रसर हुई थी। जिससे उसकी कविता को काव्य सौष्ठव प्रदर्शित करने के लिए किसी रस या अलंकार आदि संबंधी शास्त्र की भी आवश्यकता नहीं थी।"

संत साहित्य परंपरा को मुख्यत: तीन कालों में विभाजित किया जा सकता है -

प्रारंभिक काल- संवत 1280 1550 तक । जिसमें मुख्य संतो के रूप में जयदेव, नामदेव, रामानंद, कबीर, रैदास, आदि के नम आते हैं।

मध्य काल - जिसका समय संवत 1550 से 1700 तक । जिसमें मुख्यत : संत नानक, अंगद, रामदास, धरमदास, दादू, गरीबदास और मलूक दास आदि के नाम आते हैं।

उत्तरार्ध काल के अंतर्गत संवत 17 00से 1850 तक। जिसमें संत रज्जब जी, सुंदरदास, यारी साहब, बुल्ले शाह, धरनीदास, दरवेश, गरीबदास दरिया दास, दया बाई और सहजोबाई आदि के नाम आते हैं।

आधुनिक काल- संवत 1850 से आज तक है। जिसमें मुख्यतः संत पलटू, तुलसी साहेब, शिवदयाल, रामदास, रामतीर्थ, मोहनदास आदि के नाम आते हैं जिन्होंने विश्व कल्याण और विश्व प्रेम का प्रचार प्रसार और संतमत का पुनरुद्धार किया।

हिंदी संत परंपरा का प्रारंभ जयदेव से माना जाता है । संतो में हम विशेषकर निर्गुण संतो की ही गणना करते हैं । निर्गुण संतो की कविता में इतनी सरलता और मनमोहकता नहीं मिलती, जितनी सगुण कवियों में मिलती है । डॉक्टर हरदेव बाहरी ने अपनी पुस्तक-' हिंदी की काव्य शैलियों का विकास "के अंतर्गत कहा है कि- सगुण उपासना भाव प्रधान है और कला के रूप रंग के अधिक निकट है। हृदय के भावों की सुंदर और स्पष्ट अभिव्यक्ति के अतिरिक्त सगुण उपासक भक्तों ने प्रकृति का वर्णन भी मार्मिक और स्वाभाविक रूप से किया है। इन्हीं कारणों से प्रेम मार्गी काव्य में ज्ञान मार्गी काव्य से कुछ अधिक कवित्व है और सगुण उपासिकों की रचनाओं में काव्य और कला सबसे अधिक है।

आधुनिक युग में संत रैदास की विचारधारा का अपना विशिष्ट महत्व है। लौकिक दृष्टि से, जब बड़े से लेकर छोटे तक, सब प्राणी कर्तव्य विमुख हो रहे हैं । तब लोक परलोक की निंदा स्तुति से दूर, अपनी सत साध्वी पत्नी के साथ मामूली सी झोपड़ी में बैठे हुए , जूता सीकर जीविका चलाने वाले, भक्त फकीर और तन्मय संत रैदास का कर्तव्य परायण होकर गृहस्थ जीवन व्यतीत करते हुए आत्म उद्धार के लिए,भक्ति पथ अपनाने का संदेश किसे नहीं मोह लेता । अभ्युदय से लेकर, निष् श्रेयस की ओर ले जाने वाली, उनकी वाणी सचमुच अनुकरणीय है । उनका लौकिक और आध्यात्मिक चिंतन संसार के सभी दुखों को दूर करने के लिए रामायण के समान प्रभावशाली औषधि है, समाज के लिए भी और व्यक्ति के लिए भी।

मध्यकालीन भारत जब अंधविश्वासों के घनघोर अंधेरे में सांस ले रहा था और कुछ सामाजिक रूढ़ियों ने हमारे धर्म में सड़न पैदा कर दी थी। उस समय संत रैदास ने अपने हृदय के दर्द को इस प्रकार अभिव्यक्त किया-'

'हम अपराधी नीच घर जन्मे,
कुटुंब लोग हाँसी रे'।
प्रत्येक व्यक्ति जन्म तक एक समान है।सब में एक ही रंग का रक्त मांस और अस्थियां हैं, फिर भी संसार में आकर व्यक्ति धर्म, जाति और वर्ण के नाम पर क्यों बटा हुआ है ?इसको उन्होंने निम्नलिखित दोहे में स्पष्ट किया है -

हिंदू तुरक नहीं कछु भेदा। सब में एक रक्त और मासा।

संत रैदास में सत्य भी है और ऐसा संघर्ष जीबी व्यक्तित्व भी है। जो किसी भी प्रकार की परतंत्रता को नहीं स्वीकार कर सकता।संत रैदास एक ऐसे स्वराज्य की कल्पना करते हैं। जहां पर प्रत्येक व्यक्ति को अन्न मिले।सभी मनुष्य बराबर हो। कोई ऊंचा नीचा नहीं हो। सभी प्रसन्न रहें और कुल मिलाकर के एक ऐसे समान धर्मी, साम्यवादी, सामाजिक व्यवस्था की, उन्होंने कल्पना की है-

'ऐसा चाहू राज, जहां मिले सबन को अन्न छोट-बड़े सब सम बसै, रैदास रहें प्रसन्न।

संत रैदास ने माना कि व्यक्ति के व्यक्तित्व से जब तक विषमताएं समाप्त नहीं हो जाएंगी ,तब तक वह श्रेष्ठता को प्राप्त नहीं कर सकता। इसलिए उन्होंने मनुष्य को अपने जीवन में काम, क्रोध, मद , मोह और लोभ से सदैव दूर रहने की की प्रेरणा दी। जिस व्यक्ति में इन पांच विकारों को छोड़ दिया है, वह व्यक्ति महान है।संत रैदास सत्य, संतोष और सदाचार को ही जीवन का आधार मानते हैं। साथ ही उन्होंने मानव जाति के उत्थान के लिए दया भाव का भी उपदेश दिया। उन्होंने व्यक्ति के लिए आवश्यक माना है कि जो व्यक्ति अपनी समस्त इंद्रियों को जब वश में कर लेता है, तो वहीं उसके आनंद का आधार है। इच्छाओं को भोग से दूर रखने पर ही व्यक्ति का मन शांत रहता है। मन की शांति ही, संतोष का कारण है और संतोष व्यक्ति का सबसे बड़ा धन है। सत्संगति जीवन के लिए परम आवश्यक है। आचार्य शुक्ल ने भी कुसंगति के ज्वर को सबसे भयानक माना हैं।

निष्कर्ष:

संत रैदास का जीवन और काव्य उदात मानवता के लिए ,आवश्यक सदाचारों के शाश्वत सैद्धांतिक मूल्यों का भंडार है।उन्होंने मानव मात्र की पूजा के साथ-साथ ,श्रम के प्रति भी आस्था का उपदेश दिया जो उस युग के और किसी अन्य संत में इतनी प्रखरता के साथ नहीं देखा जाता। संत रैदास को महान संतों की अविरल परंपरा की एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में देखा जाता है। संत रैदास एक अनन्य एकांतिक भक्त थे जिन्होंने अपनी भक्ति परक विचारधारा को प्रतिपादित करके मध्ययुगीन भक्तों की परंपरा में उल्लेखनीय स्थान बनाया है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

श्री हरिशंकर शर्मा -कबीर एक व्यक्तित्व और कृतित्व पृष्ठ 6

डॉ रामकुमार वर्मा- हिंदी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास। पृष्ठ 193

पंडित परशुराम चतुर्वेदी -कबीर साहित्य की परख।पृष्ठ संख्या 17

डॉक्टर हरदेव बाहरी- हिंदी की काव्य शैलियों का विकास पृष्ठ 54

शिव प्रसाद गोयल- संत रैदास

डॉ एन सिंह -संत कवि रैदास मूल्यांकन और प्रदेय ,

साखी संख्या 42 पृष्ठ 23

****